International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 01-03-2021, Accepted: 02-04-2021, Published: 02-05-2021
Volume 7, Issue 3, 2021, Page No. 01-07

मैना के संघर्ष का धारावाहिक - 'धार'

डॉ. मिनी जोर्ज
असोसियेट प्रोफसर, विभागाध्यक्षा और शोध निर्देशक हिन्दी स्नातकोत्तर एवं शोध विभाग कैथोलिक्केट कॉलेज, पत्तनमतिट्टा, केरल, भारत

सारांश
हिन्दी कथा साहित्य की वर्तमान पीढी में नई भाव भूमि को लेकर उभरे कथाकारों में राम संजीव प्रसाद अपनी अलग पहचान रखते हैं। संजीव का सन् 1990 ई में प्रकाशित धार उपन्यास आदिवासी उपन्यास के इनिहास में एक नई उपलब्धि माना जा सकता है। बिहार के सथ्थाल परगना के कोयला क्षेत्र के शोषित जीवन की त्रासदी और उनकी रचनात्मक संघर्ष गाथा को उपन्यासकार ने इस उपन्यास में व्यापक फलक पर परिभाषित किया है। उपन्यास के आदि से अन्त तक दलित शोषण के विरुद्ध आवाज़ उठाती रही मैना दलित नारी की विद्रोही चेतना का प्रतीक है। व्यवस्था व पूँजीपतियोंसे शोषित अपने व अपने समाज केलिए लडाई करती मैना की कुर्बानी अन्याय के विरुद्ध के संघर्ष के धारावाहिक की कुर्बानी नहीं है बल्कि शोषण के देर के नीचे दबी यह विद्रोह रूपी चिनगारी, दलितों की वैचारिक क्रान्ति को धधकनेवाली ही है।

मूलशब्द: उपलब्धि, त्रासदी, संघर्ष, फलक, विद्रोह, कुर्बानी, चिनगारी

प्रस्तावना

हिन्दी कथा साहित्य की वर्तमान पीढी में नई भाव भूमि को लेकर उभरे कथाकारों में राम संजीव प्रसाद अपनी अलग पहचान रखते हैं। वे भीड से अलग राह चलनेवाला अनोखा रचनाकर हैं। उन्होंने अपनी रचनाओं में चाहे कहानी हो या उपन्यास, समकालीन जीवन यथार्थ को गहराई से रेखांकित किया है। उन्होंने अपने कथा साहित्य में हाशिये के पिछडे, उपेक्षित, वर्जित क्षेत्र के दलित जीवन की दर्दनाक व्यथा को वाणी दी है। उन्होंने प्रेमचन्द और फणीश्वर नाथ रेणु की उपन्यास परम्परा को आगे बढाया। डॉ रिगिश काशिद के मतानुसार - "उनके अन्दर का लोकधर्मी कलाकार त्रासद जीवन के पीछे स्थित कुटिल साजिशों की पोल खोलकर बुनियादी तथ्यों का उद्घाटन करता है। फिर चाहे पिछडा भू-भाग हो, सर्कस की दुनिया हो, कोयला क्षेत्र हो, जनजातीय जीवन हो या लोककलाकारों की जीवनी।"[1] संजीव के प्रमुख उपन्यास हैं - 'किसनगढ के अहेरी', 'सर्कस', 'सावधान', 'नीचे आग है', 'धार', 'पॉव तले की दूब', 'जंगल जहाँ शुरु होता है', 'सूत्रधार' और 'आकाश चंपा'।

संजीव का सन् 1990 ई में प्रकाशित 'धार' उपन्यास आदिवासी उपन्यास के इतिहास में एक नई उपलब्धि माना जा सकता है। बिहार के संथाल परगना के कोयला क्षेत्र के शोषित जीवन की त्रासदी और उनकी रचनात्मक संघर्ष - गाथा को उपन्यासकार ने इस उपन्यास में व्यापक

फलक पर परिभाषित किया है। उपन्यास के केन्द्र में संथाल परगना का बाँसवाडा क्षेत्र और वहाँ के दमघुट वातावरण में जीवन घसीटते आदिवासी ही हैं। यहाँ के आदिवासी लोग जंगल में प्रकृति की गोद में रहनेवाले व बेकारी, गरीबी, भुखमरी, अशिक्षा, अंज्ञान व अन्धविश्वास से ग्रस्त तथा अन्धकार में भटकनेवाले निरीह लोग हैं। उपन्यासकार ने इस उपन्यास में पूँजीवादी व्यवस्था, बिचौलियों की कुटिलताएँ, आदिवासी व श्रम जीवियों पर पूंजीपति वर्ग द्वारा किया जानेवाला अमानवीय शोषण, माफिया गिरोहों का आतंक, नारीशोषण, राष्ट्रीय संप्पति की लूट, व्यवस्था की विसंगतियाँ, आदिवासियों की नई चेतना और संघर्ष को महाकाव्यात्मक घरातल पर कथ्य बनाया है।

'धार' उपन्यास की कथा का प्रारंभ नयी चेतना की सूत्रधार आदिवासी स्त्री मैना को केन्द्र में रखकर होता है, जो अशिक्षित होने के बावजूद सजग और विद्रोही है। प्रचलित व्यवस्था के प्रति समस्त आदिवासियों का विरोध एवं विद्रोह की चेतना मैना के नेतृत्व में साकार हो उठी है। कोयला खदानों के आसपास मनुष्य कुछ पल भी ठीक से साँस नहीं ले पाता, वहाँ पूँजीवादी व्यवस्था से शोषित व प्रताडित आदिवासी अभिशप्त जीवन जीने केलिए मज़बूर है। दबंग नारी मैना निस्वार्थ मन से संथाल परगना के आदिवासियों के शोषण के विरुद्ध मशाल लेकर खडी रहती है। इस शापग्रस्त कथाक्षेत्र और वहाँ की समस्या को संजीव ने यों शब्द बद्ध किया है - "न दिन है, न रात। दोनों की दहलीज पर संथाल परगना का पूरा नंगा इलाका घायल गुर्राते सुअर की तरह है। नंगी, अधनंगी पहाडियाँ, जहाँ - तहाँ खडे साल, महुए खजूर और ताड के पेड ..... बलूई बंजर धरती, सूखती नदियाँ, सूखते हुए तालाब, भयंकर पोखरियाँ खादें, जहाँ - तहाँ सोये पडे मूर्दे से लोग। मंत्र - कीलित पूरा इलाका, इन्सानों को मवेशियों के रूप में हाँकते ले जा रहे हैं ठेकेदार, रामपुर हाट, चित्तरंजन जामताडा, वहाँ से ट्रेन पकडकर असम, बंगाल, बिहार या कहीं और।"[2] इस कथन से विदित होता है कि बाँसगडा गाँव के आदिवासी लोग किस तरह पूँजीवादी व्यवस्था की तरह अभिशप्त जीवन बिताते हैं।

मौना के पिता टेंगर ने पूंजीपति महेन्द्र बाबू को अपनी ज़मीन तेजोब के कारखाना केलिए देकर वहाँ नौकरी प्राप्त की थी। कोयला खदान और कारखाने के परिणाम स्वरूप यहाँ का प्राकृतिक परिवेश प्रदूषित मिलता है। कुएँ, तालाब सबमें तेजाब है। इस फैक्टरी ने गाँव की खेती-बाडी, कुआँ, पोखरा सब खराब कर दिया। बारिश में पानी की जगह तेजाब बरसने लगता है। ग्रीष्म ऋतु में सूर्य की तेज किरणें और तेजाब की फैक्टरी का धुआँ जान लेनेवाले बन जाता है। कोयले के खजाने पर रहने के बावजूद ये आदिवासी पूर्णतः कंगाल हैं। मैना अपना आक्रोश व्यक्त करती हुई कहती है। "हम को याद आता, जब हम बच्चे थे, खेती से चार - छः महीने का काम चल जाता आज एक दिन का भी नहीं। खेत-खतार, पेड, रूख, कुआँ, तालाब हम और हमारा बाल - बच्चा तक आज तेजाब में गल रहा है। पहले हम चोरी का चीज़ नहीं जानते थे। भीख कभी नहीं माँगी, चुगली- दलाली कभी नहीं किया, इज्जत कभी नहीं बेचा, आज हम सब करते, आदत पड गया है, बल्कि कहे इसके बिना गुज़ारा नहीं।"[3] आदिवासियों केलिए पहले खेती में तीन महीने का मोटा - सोटा अनाज भी तो मिल जाता था और जब से कारखाना खुला एक तिरिन भी नहीं मिलता।

कारखाने में काम करनेवाला मज़दूर अपना दर्द यों प्रकट करता है - "चार - चार महीनों का तनखाह रोक के रखा, पूरा बाँसगडा में जहर घोल दिया, सबको लंगडा, लूला, अपाहिज और रोगी बना दिया।"[4] सब कहीं दम घोटने वाला वातावरण है।

बस्तियाँ धूप और धूए में जलती रहती हैं। बच्चे अर्धनग्न हैं, निरन्तर खाँसते लोग, चारों तरफ गन्दगी का साम्राज्य फैला है। लोगों को पीने तक का पानी नहीं मिलता है। उपन्यास का पात्र महादेव मुरमु मैना से कहता है - "का मैना? खाना तो खाना, पानी भी नहीं है, तेरे पास"? उस समय मैना की नज़र महेन्द्र बाबू की फाक्टरी की पाइप लाइन पर टिकी रहती है। "सहसा डब्बे से दौडकर हथौडा उठा लाई और दोनों हाथों से उसने पाईप के ज्वाइंट पर दे मारा। देखते ही देखते फौट्वारा की शक्ल में पानी का स्रोत खुल गया। तालियाँ बज उठीं। सबने चुल्लू भर - भर पानी पिया। पानी पीते ही चेतना लौटी। उसी आवेग के तहत, जिसके हाथ जो आया, उठाकर चल पडा। औरतों और बच्चों तक ने हाथ में ईंट - पत्थर उठा लिए सबको घेरकर तीरंदाज चल रहे थे अर्द्धवृत्ताकार।"[5]

संत्ताल परगना की कोयला खदानें दिन - रात कडी मेहनत करनेवाले आदिवासियों के परिश्रम पर मज़बूत है। लेकिन ताकतवर पूंजीवादी वर्ग, ठेकेदार, पुलिस अधिकारी और कुव्यवस्था के कारण उन परिश्रमी लोगों का जीवन प्रताडित, शोषित, आतंकित, अभावग्रस्त एवं असुरक्षित है। इसपर विद्रोही मैना प्रश्न उठाती है - "हमारा अपना कोई पता, ठिकाना, नई - कार्य, नई इस रख छोग है? कोईला के खजाने पे हम रएता फिर भी कंगाल? कब तक चलेगा आइसा माफिक..... "[6] यहाँ स्पष्ट है कि कठोर से कठोर परिश्रम करनेवाले मज़दूरों को दो वक्त की रोटी से भी वंचित रहना पडता है और अहंवादी शोषक ऐशो आराम की ज़िन्दगी व्यतीत करता हुआ परिलक्षित होता है। यहाँ व्यवस्था की विसंगति अनोखी ही है। ठेकेदार मज़दूरों को हाँककर ले जाते हैं और चूसकर छोड देते हैं। माफिया अब भी उनसे अमानुषिक श्रम कराते हैं। और ज़रा - ज़रा सी बात पर पीटते हैं। यही इन बेचारे आदिवासियों की नियति है।

मैना प्रारंभ से ही फैक्टरी और शोषण का तीव्र विरोध कर रही थी। कारखाना तोडने को वह अन्धेरी रात में अकेली ही कुलहाडी लेकर कारखाने की ओर निकल पडती है। इधर मैना क्रान्ति दर्शी लेखक का चेतन रूप ही है। वह आदिवासियों को अपने अधिकार और अस्तित्व के प्रति सजग कराने में सफल हो उठती है। महेन्द्र बाबू ने मैना के पति फोकल और पिता को अपने पक्ष में कर लेता है। मैना का बाप लाटी लेकर पहरा देता हुआ रात भर कारखाने का चक्कर काट रहा है। इसके प्रति बाप - बेटी के बीच निरन्तर धर्मयुद्ध चल रहा था। एक बार मैना और उसकी माँ महेन्द्रबाबू के शोषण का विरोध करती है तो उनको कई प्रताडनाएँ सहनी पडती हैं। मैना की माँ को डायन घोषित कर गाँव से बाहर निकाला जाता है। मैना को जेल में भेज देते हैं। जहाँ उसके पति और पिता उसके खिलाफ गवाही देते है। जेल में भी वह सुरक्षित नहीं रहती। जेलर ही उसकी इज्जत को लूटकर बलात्कार करता है फलतः वह एक बच्चे को जन्म देती है। जेल से रिहा होते ही मैना उस बच्चे को वहाँ छोडकर भाग निकलती है। उसी जेल के सजायफ्ता द्वारा मंगर को यह लालच दिया जाता है कि उसकी सजा कम पर दी जाएगी, यदि वह मैना के छोडे हुए बच्चे का बाप बन जाए। मंगर यह प्रस्ताव स्वीकार कर लेता है। मैना के साथ जेल से लौटे मंगर और बच्चे को देखकर उसका पति फोकल क्रुद्ध हो जाता है तब मैना पति को छोडकर सुनार जाति के परपुरुष मंगर के साथ रहने लगती है। आदिवासियों में जाति- पंचायत को महत्वपूर्ण स्थान है। नियमविरुद्ध कार्यों का विचार - विमर्श यहाँ करके मुखिया और बुजुर्ग व्यक्ति न्यायदान करते हैं। "भारत की सच्ची आत्मा पंचायत में ही है।

यह पाप - पुण्य, सत्य - असत्य का फैसला करती है, यह पुरानी व्यवस्था है।"[7] संतालों की परम्परा के अनुसार दूसरे की पत्नी से जो बुरा कर्म करे या पति के रहते पत्नी दूसरे पुरुष से सम्बन्ध करे, ये सब शैख नरक के भागी होते हैं। उस औरत का जीते जी श्राद्ध किया जाएगा। अन्ततः इसपर पंचायत बिठाई जाती है। संतालों की अन्धश्राद्धा के अनुसार चबूतरे पर कुलटा मैना का श्राद्ध किया गया। सौंताली भाषा में मैना से कहा जाता है कि - "आज तुम हमारी दुनिया को छोडकर देवताओं के लोक में जा रही हो। हमारी प्रार्थना है कि देवता तुझे सुखी रखें।"[8] मैना ने भी उनकी रीति - रिवाज़ के अनुसार मंगर और तीनों बच्चों के साथ पूजा अर्चना की। उसने देखा कि एक ओर उसकी नई जीवन यात्रा की भलाई केलिए खुशी में सभी पुरुष दल बाँधकर नाच रहे थे तो दूसरी ओर पति और पिता चबूतरे के पास कल्पित कब्र बनाकर हाथ जोडे उसका श्राद्ध कर तीन दिनों की अशुद्धि मनाने जा रहे थे। तब संताल जाति की पंचायत लाबीर की सभा में मुखिया सर्व सम्मत निर्णय सुनाते है- "फोकल किस्कू, टेंगर टुडु और जिन सन्तालों ने लाबीर की उपेक्षा कर बिना हमारी राय लिए मैना का श्राद्ध किया है, उन्हें लाबीर इसी दम से जातिच्युत करती है। मैना की मज़बूरी को ध्यान में रखते हुए उसके कसूर माफ कर उसे पुनःविवाह की इजाजत देते हैं। मंगर को पहले विवाह के खर्च स्वरूप सौ रूपए फोकल को देने होंगे। फोकल के जातिच्युत होने के कारण फोकल और मैना से जन्मे बच्चे भी मैना के हुए।"[9] आदिवासी समाज में व्याप्त रूढियाँ और अन्धविश्वास अजीबों गरीब होते हैं। मैना भी इसकी शिकार हुई। अवैध सन्तान और मंगर जैसे पराए मर्द से सम्बन्ध रखने के कारण गाँव में मैना की उपेक्षा हुई और उसे गाँव से बहिष्कृत किया गया।

मैना मंगर और तीन बच्चों के साथ रेल के भूतिया डिब्बे में रहने लगती है। स्नेहीजन, बिरादरी, गुँडे, शोषक, पूँजीवादी व्यवस्था तथा आदिवासियों की सदोष रूढ परम्परा के अमानवीय व्यवहार, घृणा, लांछन, तिरस्कार आदि से दग्ध मैना ऐसा संघर्ष नारी है, जो संघर्ष के धारावाहिक में भी थकती नहीं, बल्कि संघर्षरत है। वह एक बोल्ड नारी है, ऐसा नहीं तो परिवार सहित इस डिंब्बे में नहीं रह सकती। एक रात वह डिब्बे के आसपास शत्रु - झुंट की आहट सुनती है, जैसी ही वे गुंडे डिब्बे के दरवाजे तक आते हैं तो मंगर को जाने बिना ही उन गुंडों पर तेजाब की शीशी उँडेल देती है। वह अपनी रक्षा स्वंय करने की क्षमता रखनेवाली समर्थ नारी है।

संजीव ने मैना की संघर्ष गाथा को रंगीन बनाने के साथ-साथ आदिवासियों पर कोयला माफियाओं, ठेकेदारों और पुलिस के अत्याचार और शोषण को अभिव्यक्त किया है। इस शोषण के सिलसिले में भी वह अभावग्रस्त नारी मैना स्वाभिमानी और संवेदनशील होकर इसके विरुद्ध लडाई करती है। कोयला अंचल की संथाल जाति पूँजीपति, पुलिस, ठेकेदार, और गुँडे जैसी बाह्य शक्तियों के शोषण से अत्यधिक त्रस्त मिलती है। ढेर सारी कोयला खदाने, छोटे से लेकर बडे कारखाने के बावजूद उनका जीवन मात्र असुरक्षित, अभावग्रस्त, भूखमरी, व फटेहाल का जीवन है। उनके श्रम पर कारखानेदार, ठेकेदार, दलाल तथा अधिकारी वर्ग ही माला - मोल होते हैं। मैना के दयनीय और अभावग्रस्त जीवन को उसके इस कथन से स्पष्ट हो जाता है - "धन्न मनाऊँ रेल कंपनी का कि बछडा - बकरा कट जाता है और हम को भोज खाने को मिल जाती है।"[10] कुछ आदिवासी भूख मिटाने केलिए बगुले, सारस, मैनाएँ, तथा लाँमडी का शिकार तक करते हैं। इस अभावग्रस्त जीवन में भी अब अविनाश से नरम सम्बन्ध स्थापित कर मैना पूरी बस्ती की सरदार बनी हुई थी। वह

दुर्जनों का सामना कर बस्ती की समस्याओं को दूर करने की क्षमता दिखाती है। इसी मनोबल के कारण वह बेटी सितवाँ की शादी तथा टिपका और लूता को पढा - लिखाकर सक्षम आदमी बनाने का परिश्रम करती है।

बिहार के आदिवासी क्षेत्रों में भ्रष्टाचार कुंडली मारकर बैठा है। इसी वजह से उन दलितों की रोजी - रोटी भी ज़ारी रहती है। ठेकेदार इन बेचारों से फायदा उठाकर इस्पात कारखानों को जानेवाले वैगनों के कोयलों को निकालकर ट्रकों बाहर भेजा जाता है और खनन क्षेत्र के घटिया कोयले को वैगनों में लादकर फिर से जैसे का वैसा बना दिया जाता है। अवैध कोयला के खनन और बेचने के काम केलिए बेचारे आदिवासी मज़दूरों का उपयोग किया जाता है। अपनी पेट की आग बुझाने केलिए ये लोग किसी भी प्रकार का काम करने का जोखिम उठाते हैं। संथाल आदिवासी अपने जीविकोपार्जन केलिए सरकारी जगह से अवैध कोयला निकालकर बेचते हैं। मैना भी यह कठिन काम करती है। परन्तु उसे भी रोजी - रोटी के पर्याप्त पैसे नहीं मिलते क्योंकि प्राप्त मज़दूरी का कुछ हिस्सा पुलिस और गुंडों को कमीशन के रूप में देना पडता है। बाह्य शक्तियों के शोषण से निरन्तर राख हो जाने पर भी युनानी देवता फिनिक्स की तरह वह जिजीविषा के साथ सशक्त होकर उठ खडी होती है।

मंगर ठेकेदार पंडित की जी हुजूरी करता था। मैना ने कोयला ढोने केलिए एक ठेला खरी दलिया। मैना तथा उसका पति मंगर कोयला निकालकर शिक्शा ठेले पर ले जाते समय पुलिस मंगर की निर्दयता से पिटाई करती है। पुलिस का प्रधान काम देश की अखण्डता, कानून तथा व्यवस्था बनाए रखने की भूमिका निभाना है। वह आम आदमी का संरक्षण करने के बजाय उसे प्रताडित करती रहती है। पुलिस की पिटाई से मंगर जबह किए जा रहे बकरे की तरह तडपता है। तो मैना कहती है - "अब मत मारो साहब। मर जाएगा, अब मत मारो।"[11] यह सुनते ही पुलिस आग बबूला हो जाती है। पुलिस ने उसके ठेले को जप्त कर ले गया। पुलिस जवान अपने रोब में कहती है- "पकडकर बन्द कर दे हरामजादे को "[12]। मैना और पुलिस के बीच में सौ रूपयों पर प्रश्न निबटाया जाता है। रात के समय पैसा लेकर मंगर पुलिस थाना जाना कतराता है। भयंकर अन्धकारमयी रात को जब मैना पैसे लेकर पुलिस थाना जा रही तो वह सोचती है - "इतनी रात को अकेले थाना जाना मरघट जाने से भी ज़्यादा भयावान है"[13]। गरीबी, बदहाली और शोषण से त्रस्त मैना पुलिस को घूस देने के खिलाफ थी तो समाज उसपर क्रुद्ध व्यंग्य बाण चढाने लगा तो उसका मुँह तोड जवाब देती हुई वह कहती है - "सोचा, इज्जत का रोटी खाएँ सब, बहुत पत्तल चाटा, लेकिन कुत्ता का जात.....। कान खोलकर सुन लो, जिसको गु खाना हो खाये, लेकिन हम से सटा तो ठीक नई होगा। तुम अपना का मालिक। हम अपना का।"[14] यह कितनी ओजभरी वाणी है। "उसका दर्द यह है कि वह टाटा बिरला बनना नहीं चाहती है। भिखारी बनना भी नहीं चाहती । केवल परिश्रम कर निर्वाह करना चाहती है। परन्तु भ्रष्ट व्यवस्था में उसे यह भी नसीब नहीं होता।"[15] निर्धन लोग एक समय के भोजन की व्यवस्था नहीं कर पाते । उनसे उनकी रोटी का साधन छीनकर उन्हें रिश्वत केलिए प्रताडित करना मानवता की हत्या मात्र है।

मैना की संघर्ष गाथा की और एक कडी है अपनी बेटी सितवाँ का गुमशुद होना। उसकी इस भयावह स्थिति का यथार्थांकन संजीव ने किया है - "माँ को डायन बताकर कुत्ती की तरह पीट - पीटकर भगा दिया गया, बेटी सिता को लालच देकर लूटा-गया, फिर फोकल की आदमीयता खरीद ले गई, बेटी सितवा को लालच देकर बरगला लिया गया। लुत्ता पराया है, और टिपका भी उसका नहीं,

फोकल का बेटा है फिर उसकी झोली में बचा क्या। एक प्रतिहिंसा की आग और एक नफरत का जज्बा, जो उसे कभी भी चैन नहीं लेने देते।"[16]

भारतीय समाज में वर्ण व्यवस्था ने शक्ति और धन के बल पर सवर्णों को इज्जत, सम्मान और प्रतिष्ठा के अधिकारी बनाए हैं। दलित युवतियाँ उनके पंजे में फंसकर उनके विलास की सामग्री बनती हैं। पेट की आग बुझाने केलिए कई नारियाँ देह बिक्री करती हैं। मैना के क्षेत्र में भी वेश्यावृत्ति पनपने लगी। वेश्या से पूछने पर यही उत्तर मिलेगा - "ये तूने क्या हालत बना लिया रे, सहानुभूति का स्पर्श पाते ही पिघल गई तुरिया, पेट का ये गड्डा भरने का खातिर का नहीं किया दीदी। हुंवई रोग हो गया। अब कोई पानी तक देनेवाला नहीं का ने अभी की दुरगति लिखी है।"[17]

मैना को भी उन भूखे भेडियों ने छोडा नहीं। अपने पति फोकल के बिना मंगर, जेलर, पंडित सीताराम जाने कितने मरदों ने उसे नोच डाला। समाज के सवर्णों की दृष्टि में मैना केवल भोग की साधन थी। यहाँ भी मैना की अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध की संघर्ष चेतना को दिखाई गई है। आधि रात में बबन उसका बलात्कार करने को उद्यत होता है तो वह उसे ऐसा सबक सिखाती है कि बबन मैना को माँ तक बोल देता है - "उसके मुँह से निकल पडा मादरचोद। उसके साथ ही इस दारू से चाबियाये हाथ की कलाइयाँ उसकी मूठ में आकर कडक हो उठी। दर्द से बिलबिलाकर वह जवान कुत्ते - सा काय - काय करने लगा। अरे बाप रे! छोड दो टूट जाएगा। माँ, तुम माँ हो। पचास रूपया ले लो।"[18]

व्यवस्था में परिवर्तन लाने के पक्षघर शर्माबाबू और मैना ही पूँजीपति तथा श्रमिकों के संघर्ष के केन्द्र में कार्यरत है। शर्मा बाबू आदिवासियों को अपनी यथार्थ स्थिति का बोध कराते हुए, उनके मौन को तोडने का प्रयास करता है - "तो साथियों, यह 'धार' ही हमारी शक्ति है और धार का भोथरा होना ही मौत है। यहाँ ही नहीं जहाँ-जहाँ भी साम्यवादी सरकारें हैं, यह उपमा लागू होती है.... चारों तरफ भेडिये गुर्रा रहे हैं। वे हमें खा जाने पर आमादा हैं। लेकिन क्या हम उनके नापाक इरादे पूरे होने देंगे। नहीं हरगिज़ नहीं। इसलिए हमें घार की ज़रूरत है, सतत सान से ताजा होती 'घार'। चाहे हमें कोई भी कुर्बानी क्यों न देनी पडे।"[19] मैना भी दलित समाज को अपने अस्तित्व और अधिकार के प्रति सजग कराती है। महेन्द्र जैसे भेडिये की कुटिलता और शोषण से मुक्त होने का सबक सिखाती है। वह निस्सन्देह स्वयं सिद्ध नारी है। उसके द्वारा संतालों में विद्रोह जगाया जाता। आदिवासी भाई - बहनें अपने अधिकारों के प्रति सजग होकर शोषण के विरुद्ध लडाई करने को तैयार होते हैं।

अविनाश शर्मा, मैना और अन्य आदिवासी सहकारिता के बल पर जनखदान का निर्माण किया जाता है। उनका लक्ष्य यह था कि उनके जीवन यापन केलिए आवश्यक कोयला निकालकर बाकी राष्ट्र को सौंपाया जाय। आदिवासियों की लगन और कठिन मेहनत के कारण शीघ्र ही खानदान पूर्णत्व को प्राप्त कर लेती है। फिर यह खानदान पूँजीपतियों केलिए चुनौती बन गयी। व्यवस्था उसे खारिज करती है। ये आदिवासी लोग जनखदान की रक्षा हेतु पुलिस, पूँजीपति तक व्यवस्था से संघर्ष करते हैं। किन्तु कुटिल व्यवस्था, पूजीपतियों की कुटिलता और भ्रष्ट अधिकारियों के कारण यह योजना चकनाचूर हो जाती है। जब कोयला निकालने का समय आता है, तब अधिकारियों द्वारा बीस हज़ार की रिश्वत माँगी जाती है। अन्ततः जनखदान के स्थान पर पूँजीपति महेन्द्रबाबू का अवैध कोयला खदान का राष्ट्रीयकरण होता है। कई आदिवासी तथा मैना बुलडोज़र के नीचे शहीद हो जाते हैं। परन्तु उपन्यासकार आशा करते हैं कि अपने समाज केलिए शहीद होनेवाली मैना कभी भी मर नहीं

सकती। "किन्तु उसकी मृत्यु चेतना और संघर्ष की समाप्ति नहीं है। वह मरी नहीं, मर सकती ही नहीं। जहाँ - तहाँ अन्धेरे में जुगुनु आपको चमकता दिखलाई दे, ईमानदारी से पुकारिए, मैना। काम साधे रहिए, बहुत गहराई से कोई जवाब आएगा है।"[20]

बास्तव में उपन्यास के आदि से अन्त तक दलित शोषण के विरुद्ध आवाज़ उठाती रही मैना दलित नारी की विद्रोही चेतना का प्रतीक है। व्यवस्था व पूँजीपतियोंसे शोषित अपने व अपने समाज केलिए लडाई करती मैना की कुर्बानी अन्याय के विरुद्ध के संघर्ष के धारावाहिक की कुर्बानी नहीं है बल्कि शोषण के ढेर के नीचे दबी यह विद्रोह रूपी चिनगारी, दलितों की वैचारिक क्रान्ति को धधकानेवाली ही है।

सन्दर्भ

1. डॉ. गिरीश काशिद - संजीव : जनधर्मी कथा शिल्पी, दिव्या डिस्ट्रीब्यूटेर्स, कानपुर, सं.2011, पृ.126,
2. संजीव - धार, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, सं.1990, पृ.26,
3. वही, पृ.56,
4. वही, पृ.60,
5. वही, पृ.58,
6. वही, पृ.57,
7. डॉ. विमल शंकर - अनुसन्धान के नए सोपान, प्रेरणा प्रकाशन, मुरादाबाद, सं.1984, पृ.32,
8. संजीव - घार, पृ.53,
9. वही, पृ.55,
10. वही, पृ.65,
11. वही, पृ.104,
12. वही, पृ.104,
13. वही, पृ.104,
14. वही, पृ.91,
15. डॉ. शिवाजी देवरे (संपा) - समकालीन हिन्दी उपन्यासों में आदिवासी विमर्श- विद्याप्रकाशन - कानपुर, सं. 2013, पृ. 113,
16. डॉ. संजीव - धार, पृ.106,
17. वही, पृ.151,
18. वही पृ.115,
19. वही, पृ.179,
20. वही, पृ.209